मुक्तिपथ पर प्रथम चरण...

तीर्थधाम
ढाईद्वीप जिनायतन

आत्मा ही है शरण

जिनश्रुत फाउण्डेशन कोर्स
लेवल - 2

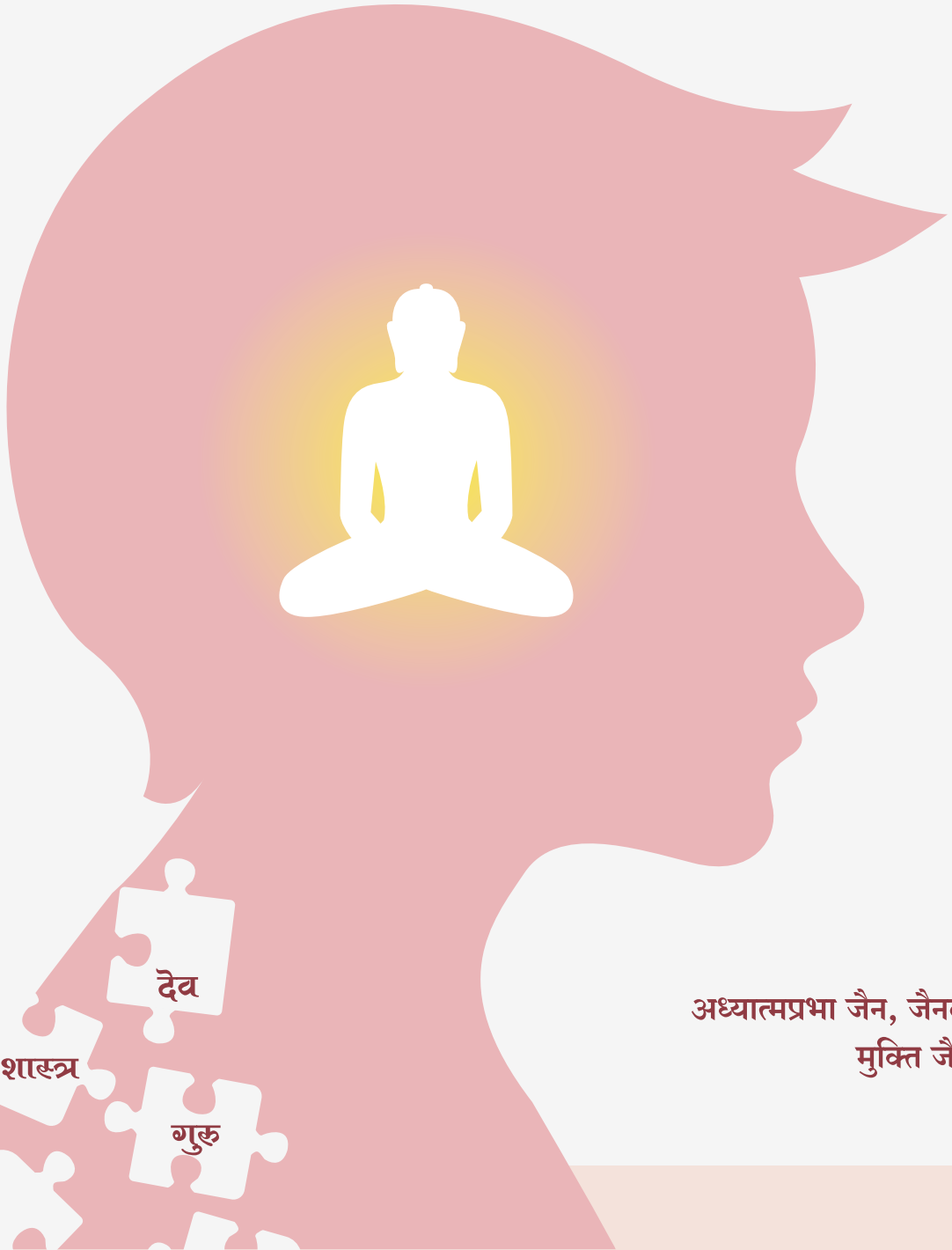

अध्यात्मप्रभा जैन, जैनदर्शनाचार्य
मुक्ति जैन, शास्त्री

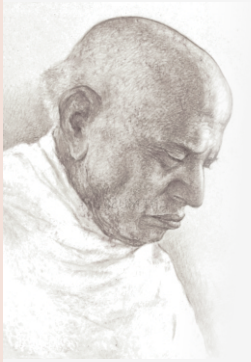

लेखक की कलम से...

जिनश्रुत बाल शिविर के निमित्त से इस पाठ्यक्रम को बनाकर प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

यह पाठ्यक्रम डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल द्वारा रचित बालबोध पाठमाला इत्यादि कृतियों को आधार लेकर आई.जी.सी.एस.ई. बोर्ड की शिक्षण पद्धति को अपनाते हुए बनाया गया है। इसका उद्देश्य बालकों में जैनधर्म के सिद्धांतों को इसप्रकार हृदय में उतारना है कि वे स्वयं जीवन में निर्णय कर सकें कि उन्हें किन देव-शास्त्र-गुरु की शरण में जाना है या क्यों और कैसे जैन सिद्धांतों को जीवन में उतारना है?

जैन सिद्धांत मात्र उनकी स्मृति का विषय न बनकर उनकी जीवनचर्या का विषय बने, यही प्रयास है।

यह शिक्षण पद्धति की नवीन प्रयोगविधि है, जिसमें छात्र स्वयं प्रयोगात्मक विश्लेषण करके निष्कर्ष को प्राप्त करते हैं।

यदि यह प्रयोग बाल शिविर में सफल होता है तो इसे आवश्यकतानुसार परिष्कृत और परिमार्जित करेंगे तथा साथ ही पूरे पाठ्यक्रम का भी इसी विधि से नवीनीकरण किया जाएगा।

कहानियों में डॉ. प्रवीणकुमार शास्त्री, इंदौर का सहयोग रहा।

इस पुस्तक के मुखपृष्ठ की सज्जा एवं पूरी पुस्तक की इलस्ट्रेशन में प्राजक्ता शहा, पुणे का अमूल्य योगदान रहा है।

कृति निर्माण में पण्डित अखिल शास्त्री, मंडीदीप तथा श्री कमल शर्मा का बहुमूल्य सहयोग रहा है।

– अध्यात्मप्रभा जैन, जैनदर्शनाचार्य

मुक्ति जैन, शास्त्री

श्री कुन्दकुन्द कहान शास्त्र प्रभावना ट्रस्ट, इन्दौर
'चतुर्थ पुष्प'
मूल्य 25/-

देव-शास्त्र-गुरु

क्या सीखेंगे?

- ★ सच्चे देव-शास्त्र-गुरु का स्वरूप और उनकी पहचान
- ★ वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी का अर्थ
- ★ आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठी का स्वरूप

संयम – विराग, तू इतना उदास क्यों बैठा है?

विराग – मुझसे बहुत बड़ी गलती हो गई, भगवान मुझे दंड देंगे।

संयम – अरे भगवान कुछ देते-लेते नहीं हैं। जो वीतरागी, सर्वज्ञ और हितोपदेशी होते हैं, वे ही सच्चे देव हैं। जिनका राग-द्वेष नष्ट हो चुका है, वे वीतरागी होते हैं। वे किसी को दण्ड या पुरस्कार कैसे देंगे?

विराग – ये राग-द्वेष क्या होते हैं?

संयम – जब हम किसी को भला जानकर चाहने लगते हैं, उसे राग कहते हैं; जब हम किसी को बुरा जानकर दूर करना चाहते हैं, उसे द्वेष कहते हैं और जो राग-द्वेष से रहित होते हैं, उन्हें वीतरागी कहते हैं।

विराग – अब समझ आया, जब भगवान किसी को अच्छा और बुरा मानते ही नहीं हैं तो वे दंड या पुरस्कार क्यों देंगे। फिर भगवान करते क्या हैं?

संयम – भगवान तो मात्र जानते-देखते हैं, कुछ करते नहीं हैं।

विराग – मात्र जानते-देखते हैं?

संयम – हाँ और क्या! वे तीन लोक और तीन काल की समस्त बातों को एकसमय में एकसाथ जानते हैं, इसलिए उन्हें सर्वज्ञ कहते हैं।

ऐसा होता तो

✣ वीतरागता होने से पहले यदि सर्वज्ञता होगी, तो क्या-क्या परिणाम होंगे?

क्रिएटिव राइटिंग

यदि आप सर्वज्ञ हो जाओगे तो आप क्या-क्या करोगे?

अपने प्रतिदिन के जीवन में से राग और द्वेष के पाँच-पाँच उदाहरण ढूँढ़िए।

मुख्य पारिभाषिक शब्द

★ वीतरागी ★ सर्वज्ञ
★ राग ★ द्वेष
★ देव

विराग – तो क्या भगवान सबकुछ जानते हैं? हम क्या करते हैं? क्या सोचते हैं? वे यह भी जानते हैं।

संयम – हाँ, हाँ! सबकुछ।

विराग – यह तो बड़ा मजेदार है, यदि मैं सर्वज्ञ हो जाऊँगा तो किसके मन में क्या चल रहा है, सबकुछ जान जाऊँगा।

संयम – जानकर क्या करोगे? उसे मारोगे? इसीलिए तो सर्वज्ञता होने से पहले वीतरागता नियम से प्रकट होती है।

विराग – और हितोपदेशी होने का क्या तात्पर्य है?

संयम – हितोपदेशी अर्थात् हित का उपदेश देनेवाले। जिनका उपदेश हर क्षेत्र और हर काल में सब जीवों को सुखी होने का मार्ग बताए, वही उपदेश हित का उपदेश है। जो सर्वज्ञ होंगे, वे ही सर्व के ज्ञाता होने से सर्व जीवों को सुखी होने का सच्चा मार्ग बता सकते हैं।

विराग – तो क्या सभी भगवान उपदेश देते हैं?

संयम – सिद्ध भगवान उपदेश नहीं देते हैं। मात्र अरिहंत भगवान ही दिव्यध्वनि के द्वारा सुखी होने के लिए मोक्षमार्ग का उपदेश देते हैं।

विराग – अरिहंत देव संसारी जीवों को सच्चे सुख का मार्ग बताने के लिए उपदेश देते हैं – यह तो राग हुआ ना?

संयम – नहीं भाई, उनका उपदेश इच्छापूर्वक थोड़े ही होता है; अपितु तीर्थंकर नामकर्म के उदय से उनकी निरक्षरी ओंकार रूप ध्वनि खिरती है।

विराग – हमारे अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर तो 2600 वर्ष पूर्व हुए हैं, तो हमें उनकी दिव्यध्वनि का लाभ कैसे मिलेगा?

संयम – शास्त्रों के द्वारा। महावीर भगवान के बाद 683 वर्षों तक श्रुतपरंपरा से द्वादशांग के पाठी मुनिराजों द्वारा दिव्यध्वनि अनेक आचार्यों को प्राप्त हुई और फिर उन आचार्यों ने इसे लिपिबद्ध कर दिया, जो हमें आज प्राप्त है।

अंतर बताइए

हित का उपदेश और संसार का उपदेश।

पता लगाएँ

- तीर्थंकर नामकर्म क्या होता है?
- निरक्षरी ओंकार ध्वनि क्या होती है?

नई शब्दावली

- ★ द्वादशांग – जिनवाणी के 12 अंग
- ★ दिव्यध्वनि – तीर्थंकर भगवान का धर्मोपदेश

कक्षा में चर्चा कीजिए

- तीर्थंकर यदि रागवश उपदेश देते हैं, तो क्या आपत्ति आएगी?
- संसार हित का उपदेश वस्तुतः हितोपदेश है ही नहीं – इस वाक्य को सिद्ध कीजिए।

विराग – पर शास्त्र तो बहुत सारे हैं, तो उनमें से सच्चे शास्त्र कौन से हैं? हमें कैसे पता चलेगा?

संयम – जो शास्त्र वीतरागता के पोषक हों, वे ही सच्चे शास्त्र हैं।

जिन शास्त्रों में शृंगार, भोग और कुतूहल आदि के वर्णन द्वारा रागभाव और हिंसा, युद्ध आदिक द्वारा द्वेषभाव का पोषण हो, वे शास्त्र नहीं हैं।

जिन शास्त्रों में राग-द्वेष भावों को हेय बताकर वीतराग भाव का पोषण किया गया हो, वे ही शास्त्र पढ़ने-सुनने योग्य हैं।

विराग – एक बार मंदिर में मैंने सुना था कि शास्त्रों में पूजा-विधानादि को कार्यकारी बताया है, और अनेक शास्त्रों में तो इन्हें सोने की बेड़ियाँ कहा है अतः त्यागने योग्य बताया है। शास्त्रों में ऐसे विरुद्ध भासित होने वाले कथन आते हैं तब कौनसे शास्त्र को सच्चा शास्त्र माना जाए?

संयम – इसमें इतना परेशान होने की कोई बात नहीं है। विषय अनुसार भिन्न-भिन्न अपेक्षा से ऐसे कथन जिनवाणी में मिलते हैं। परन्तु जो शास्त्र अंत में वीतरागता की ओर नहीं ले जाये, और संसार को बढ़ाने का ही उपाय बताये, तो वह शास्त्र कुशास्त्र की श्रेणी में ही आएगा।

जैसे – हिंसा का निषेध अनेक अन्य मतों के ग्रंथों में भी किया गया है, परन्तु वे द्वेष छुड़ाकर राग का उपदेश देते हैं, अतः वे सच्चे शास्त्र नहीं हैं। उसीप्रकार अनेक जैन ग्रंथों में शृंगार और युद्ध के कथन भी आते हैं, परन्तु अंत में उसे निंदनीय कहकर वैराग्यपूर्वक मोक्षमार्ग का ही उपदेश दिया जाता है।

विराग – तो ऐसे कथन आते ही क्यों हैं?

संयम – जैसे किसी बालक को सीखने के काल में सहायक पहियों वाली साइकिल दी जाती है, और सीख जाने पर सहायक पहियों को हेय या अनुपयोगी बताकर छुड़वाया जाता है, उसी प्रकार जिनवाणी में भी बहुत रागादि मिटाने के प्रयोजन से थोड़े रागादि के पोषण का कथन आता है, पर अंततः मोक्ष प्राप्ति के लिए यह राग भाव भी त्यागने योग्य है, यह बताया जाता है।

विराग – अच्छा अब समझा। जो हमें धर्म उपदेश देते हैं, वे ही हमारे गुरु हैं ना?

संयम – जो हमें धर्म उपदेश देते हैं, वे तो हमारे सामान्य गुरु हैं। यहाँ तो पाँच परमेष्ठियों में आने वाले आचार्य, उपाध्याय, साधु ही सच्चे गुरु हैं।

विराग – तो क्या नग्न दिगम्बर मुनिराज ही सच्चे गुरु होते हैं?

संयम – हाँ! और क्या?

स्वयं को चुनौती दें

किसी शास्त्र में उपदेश दिया है कि यदि आपका धर्म संकट में हो, तो हिंसा का प्रयोग उचित है। क्या आप इस बात से सहमत हैं? क्या आप उस पुस्तक को सच्चा शास्त्र मानेंगे? कारण सहित उत्तर दीजिये।

_____

_____

_____

_____

_____

_____

_____

मुख्य पारिभाषिक शब्द

★ सच्चे शास्त्र
★ सच्चे गुरू

अब तुम साधुओं का सामान्य स्वरूप समझो।

ऐसे मुनिराज जो पर-पदार्थों को इष्ट-अनिष्ट मानकर राग-द्वेष नहीं करते।

शरीर की अवस्थाओं में सुखी-दुखी नहीं होते। जिन्हें शरीर की संभाल का भाव नहीं आता।

जो वन में वास करते हैं।

22 परिषहों को सहन करते हैं।

28 मूलगुणों का पालन करते हैं।

समस्त आरम्भ और परिग्रह से रहित होते हैं।

आहार-विहारादि क्रियाओं में सावधान रहते हैं।

ऐसे आत्मध्यान में रत रहने वाले मुनिराज ही सच्चे गुरु होते हैं।

कक्षा में चर्चा कीजिए

- क्या नग्नपना और मुनिपना एक ही बात है?

28 मूलगुण

महाव्रत (5)	समिति (5)	इन्द्रिय विजय (5)	आवश्यक (6)	शेष मूलगुण (7)
अहिंसा	ईर्या	स्पर्शन	सामायिक	स्नान नहीं करना
सत्य	भाषा	रसना	स्तुति	दन्त-धोवन नहीं करना
अचौर्य	एषणा	घ्राण	वंदना	नग्नता
ब्रह्मचर्य	आदाननिक्षेपण	चक्षु	स्वाध्याय	एक करवट भूमिशयन
परिग्रहत्याग	प्रतिष्ठापना	कर्ण	प्रतिक्रमण	एक समय आहार करना
			कायोत्सर्ग	खड़े होकर आहार लेना
				केशलोच करना

22 परिषह

क्षुधा	दंश-मशक	चर्या	वध	तृणस्पर्श	प्रज्ञा
पिपासा	नाग्न्य	निषद्या	याचना	मल	अज्ञान
शीत	अरति	शय्या	अलाभ	सत्कार-पुरस्कार	अदर्शन
उष्ण	स्त्री	आक्रोश	रोग		

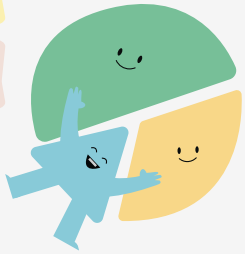

विराग – जब सब मुनिराज एक से ही होते हैं, तो णमोकार मंत्र में आचार्य, उपाध्याय और साधु – ऐसे तीन भेद क्यों किए हैं?

संयम – सामान्य साधुपना तो सभी मुनिराजों में समान ही होता है, पर मुनिसंघ की व्यवस्था के लिए और उनमें अलग-अलग विशेषताओं के पाए जाने से उनके तीन भेद किए गए हैं।

जो मुनिसंघ के नायक होते हैं।

कभी-कभी राग के उदय में धर्म के लोभी जीवों को करुणाबुद्धि से धर्म उपदेश देते हैं।

दीक्षा के इच्छुक योग्य शिष्यों को दीक्षा देते हैं।

अपने दोष प्रकट करने वालों को प्रायश्चित्त विधि से शुद्ध करते हैं।

ऐसा आचरण करने और कराने वाले आचार्य कहलाते हैं।

विराग – और उपाध्याय?

संयम – जो मुनिराज बहुत जैन शास्त्रों के ज्ञाता होते हैं।

अधिकतर तो आत्मस्वरूप में लीन रहते हैं।

कषाय अंश के उदय से आत्मा में उपयोग स्थिर न रहे, तो स्वयं पढ़ते हैं तथा औरों को पढ़ाते हैं।

जो संघ में पठन-पाठन के अधिकारी होते हैं।

वे उपाध्याय परमेष्ठी कहलाते हैं।

आचार्य, उपाध्याय को छोड़कर अन्य समस्त मुनिराज जो मुनिधर्म को धारण करते हैं,

उन्हें साधु परमेष्ठी कहते हैं।

नई शब्दावली

- ★ आरंभ – घर-गृहस्थी के काम
- ★ परिग्रह – धन, घर, कपड़े आदि सामग्री
- ★ प्रायश्चित्त विधि – दोष लगने पर खेदपूर्वक आचार्य के सामने प्रकट करना

स्वयं को चुनौती दें

आचार्य, उपाध्याय और साधु के स्वरूप को आप अपने स्कूल के परिप्रेक्ष्य में घटित करिये?

ऐसा होता तो

✢ यदि गुरु भी राग-द्वेष का ही उपदेश देंगे, तो क्या होगा?

_____

_____

_____

_____

अंतर बताइए

धर्मगुरु और आचार्य-उपाध्याय-साधु।

_____

_____

_____

केस स्टडी

एक जंगल में एक महान तपस्वी मुनिराज रहते थे। वे प्रतिदिन आत्माराधना के साथ भगवान की स्तुति-भक्ति, स्वाध्याय व सामायिक आदि कार्यों को करते थे। वे कभी उपवास करते तो कभी आहार करते। जब भी उनका निरंतराय आहार होता तो दिन में एक बार ही आहार करते थे।

वे एक दिन आहार के लिए अटपटी प्रतिज्ञा लेकर गाँव की ओर निकले तो उनकी गमन प्रवृत्ति देखने लायक ही थी। एक तो नग्न दिगंबर काया, तो दूसरी ओर नीचे चार हाथ ज़मीन देखते हुए कि किसी जीव का घात न हो जाये; चलते हुए ऐसे जान पड़ते थे कि मानो सिद्ध ही चल रहे हों।

जब वे गाँव के निकट पहुँचे तो श्रावकों ने भक्ति-स्तुतिपूर्वक उनका आह्वान किया; नवधाभक्ति के पश्चात् वे एक स्थान पर खड़े होकर निरन्तराय आहार ग्रहण करने लगे। उन्हें ना तो गर्म भोजन की अपेक्षा थी, न किसी खट्टे-मीठे स्वाद की; न ही सुगन्धि की; न ही आकर्षक भोज्य पदार्थ की और उस समय न किसी गीत-संगीत की; क्योंकि वे पंचेन्द्रियजयी होते हैं।

आहार कार्य सम्पन्न होने पर श्रावक-श्रावकों ने उनसे कुछ उपदेश की अपेक्षा रखी तो उन्होंने सभी के हितार्थ सत्य, संसार से पार उतरने वाली हित-मित व प्रिय वाणी से सबके मन को प्रसन्न कर दिया।

इसके पश्चात् सभी श्रावकगण उनकी स्तुति करते हुए बोलने लगे कि हे मुनिराज! आपका जीवन धन्य है। आप कभी किसी भी प्राणी को दुःख नहीं पहुँचाते; ना ही कभी असत्य कहते; ना ही किसी भी पदार्थ को बिना दिए ग्रहण करते हो; ना किसी भी प्रकार की स्त्रियों से राग करते और ना ही किंचित् परिग्रह रखते। आपके जैसा इस जगत में सामान्य प्राणी तो हो ही नहीं सकता।

इसके पश्चात् मुनिराज ने अच्छी तरह से देख-शोधकर अपने पीछी-कमंडलु उठाये व जंगल की ओर निकल पड़े। वे एक वृक्ष के नीचे बैठकर पुनः आत्मस्वरूप का विचार करने लगे। धीरे-धीरे आत्मा में उपयोग को सूक्ष्म करते गए और मात्र अन्तर्मुहूर्त में केवलज्ञान को प्रगट कर लिया।

तदनन्तर कुछ काल बाद शेष कर्मों का नाश करके अशरीरी सिद्ध दशा को प्राप्त कर लिया।

प्रश्न : इस कथा में आये हुए सारे मूल गुणों को पहचानिये।

क्या आप जानते हैं?

- यदि कुदेव को ही सच्चा देव मान लिया, तो धर्म के नाम पर मात्र सांसारिक प्रयोजनों की ही सिद्धि होगी और मोक्षमार्ग लुप्त हो जायेगा।
- यदि कुगुरु को सच्चा गुरु मान लिया, तो राग-द्वेष को ही सच्चा धर्म मानने लगेंगे और सच्चे धर्म तथा आत्मा की खोज ही खो जाएगी।
- यदि कुशास्त्र को ही सच्चा शास्त्र मान लिया, तो मोक्ष मार्ग का उपदेश ही बंद हो जायेगा।

विराग - आज पाँचों परमेष्ठियों का स्वरूप समझने से मुझे यह तो स्पष्ट हो गया कि जब अरिहंत और सिद्ध परमेष्ठी पूर्ण वीतरागी हैं और आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठी यथासंभव आत्मध्यान में लीन रहते हैं तो उनके पास हमें दु:खी-सुखी करने की न इच्छा है और न ही उनका कर्त्तव्य है। यदि ऐसा है तो उनके मंदिर बनाए क्यों जाते हैं और हम उनके पास जाते क्यों हैं?

संयम - अरे भाई! उन जैसा बनने के लिए हम उनके पास जाते हैं। कोई भगवान हमें कुछ देता है, यह मानकर उनका मंदिर बनवाना और उनकी पूजन-भक्ति करना, यह तो सौदेबाज़ी करना है। जिन भगवानों का ऐसा स्वरूप बताया गया है - वे रागी-द्वेषी होने से भगवान हैं ही नहीं।

अत: हम ऐसे देव-शास्त्र-गुरु की शरण में ही जाते हैं, जो स्वयं वीतरागी हों, वीतरागता का उपदेश देते हों और स्वयं वीतरागता के मार्ग पर चलते हों।

जीवन में उतारें

क्या इन कारणों से मंदिर जाना उचित है? यदि नहीं तो क्यों?

भूत भगाने के लिए पद्मपुरा और तिजारा जाना	बच्चों के बाल उतरवाने और बच्चों की चाह में महावीरजी जाना
ढाईद्वीप मंदिर बहुत सुंदर बना है, अत: दर्शन करने जाना	यह मंदिर ऐतिहासिक है, इसलिए दर्शन करने जाना
यह मंदिर मेरे दादाजी ने बनवाया था, इसलिए दर्शन करने जाना	इस मंदिर में रत्न की प्रतिमाएँ हैं, इसलिए दर्शन करने जाना

ऐसा होता तो

- यदि भगवान भी हमारे समान ही रागी-द्वेषी होते तो क्या होता?

क्या आप जानते हैं?

- भगवान की मूर्ति वस्त्र- आभूषण व अस्त्र-शस्त्र आदि से रहित होनी चाहिए।
- भगवान की मूर्ति नग्न दिगम्बर वीतरागी होनी चाहिए।
- मुनिराजों का जो अंतरंग और बाह्य आचरण तीर्थंकरों ने बताया है, वही आचरण सदा होना चाहिए। (गिरते हुए काल के तर्क से उसमें छूट नहीं होती; क्योंकि सत्य सर्वकालिक होता है।)
- भारत में अलग-अलग क्षेत्र के व अलग-अलग काल के मंदिरों में मूर्तियाँ भले ही देखने में अलग-अलग दिखें पर वे वीतरागी होने से समान ही हैं।
- मंदिर में उचित अष्ट द्रव्यों के अतिरिक्त अन्य किसी भी सामग्री का उपयोग भगवान की पूजा में करने योग्य नहीं है।
- मंदिर में अग्नि का प्रयोग वर्जित है।
- मंदिर में शुद्ध प्रासुक जल का ही प्रयोग होना चाहिए, वह भी कम-से-कम मात्रा में।
- बार-बार भगवान का अभिषेक, स्त्रियों का अभिषेक करना भी वर्जित है।

स्वयं को चुनौती दें

★ आपको अनेक बीमारियाँ हो रही हैं, आपको कोई उपचार बताये कि णमोकार मंत्र या भक्तामर मंत्र का पाठ करने से आपकी सारी बीमारियाँ चली जाएँगी, तो क्या आप उन मन्त्रों का जाप करेंगे?

★ आपने अभी सच्चे मुनिराजों का स्वरूप समझा है। क्या आपके अनुसार मुनिराजों के निम्न कार्य उचित हैं –

व्यापार या घर के झगड़े सुलझाने का उपाय बताना

राष्ट्र, समाज या परिवार में उपस्थिति और अनुमोदना करना

गंडे-तावीज या मंत्र-तंत्र इत्यादि से सुख प्राप्ति होगी, सुविधा की सामग्री मिलेगी – ऐसा उपदेश देना

पूजा, दान इत्यादि से सांसारिक सुख की वृद्धि होगी – ऐसा उपदेश देना

संसार में भी सुख है यह बताना या संसार मार्ग का उपदेश देना

★ आपने अभी सच्चे भगवान का स्वरूप समझा, क्या निम्न प्रकार से दिखने वाले भगवान वंदनीय हैं –

राग, भय, करुणा आदि के भाव से युक्त मुद्रा वाले भगवान

पत्नी सहित और वाहन पर सवार भगवान

चन्दन, फूल और फल के चढ़ावा युक्त मूर्ति

भगवान के सेवक या रक्षक की पूजा करना

शृंगार, आभूषण इत्यादि परिग्रह से युक्त भगवान

स्व-मूल्यांकन

कितना समझ आया –

	विषय	पूरा समझ आया	थोड़ा समझ आया	कुछ समझ नहीं आया
1.	सच्चे देव-शास्त्र-गुरु का स्वरूप और उनकी पहचान	○	○	○
2.	वीतरागी सर्वज्ञ और हितोपदेशी का अर्थ	○	○	○
3.	आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठी का स्वरूप	○	○	○

छहढाला

मुनिराज के 28 मूलगुण

षट् काय जीव न हनन तैं, सब विधि दरब हिंसा टरी।
रागादि भाव निवार तैं, हिंसा न भावित अवतरी।।
जिनके न लेश मृषा न जल, मृण हू बिना दीयौ गहैं।
अठ-दश सहस विधि शील धर, चिद्ब्रह्म में नित रमि रहैं।।

अन्तर चतुर्दश भेद बाहिर, संग दशधा तैं टलैं।
परमाद तजि चउ कर मही लखि, समिति ईर्य्या तैं चलैं।।
जग सुहितकर सब अहितहर, श्रुति सुखद सब संशय हरैं।
भ्रम-रोग हर जिनके वचन, मुख-चन्द्र तैं अमृत झरैं।।

छ्यालीस दोष बिना सुकुल, श्रावक तनैं घर अशन को।
लैं तप बढ़ावन हेत नहिं तन, पोषते तजि रसन को।।
शुचि ज्ञान संयम उपकरण, लखि कैं गहैं लखि कैं धरैं।
निर्जन्तु थान विलोकि तन मल, मूत्र श्लेषम परिहरैं।।

सम्यक् प्रकार निरोध, मन-वच-काय आतम ध्यावते।
तिन सुथिर मुद्रा देखि मृगगण, उपल खाज खुजावते।।
रस रूप गन्ध तथा फरस अरु, शब्द शुभ असुहावने।
तिनमें न राग विरोध, पंचेन्द्रिय जयन पद पावने।।

समता सम्हारैं थुति उचारैं, वन्दना जिनदेव को।
नित करैं, श्रुति-रति करैं प्रतिक्रम, तजैं तन अहमेव को।।
जिनके न न्हौन न दन्तधोवन, लेश अम्बर आवरन।
भू माहिं पिछली रयनि में, कछु शयन एकासन करन।।

इक बार दिन में लैं अहार, खड़े अलप निज-पान में।
कचलोंच करत न डरत परिषह, सों लगे निज-ध्यान में।।
अरि-मित्र महल-मसान कंचन-काँच निन्दन-थुतिकरन।
अर्घावतारन असि-प्रहारन में, सदा समता धरन।।

कषाय और पाप

क्या सीखेंगे?

- ★ जीव का स्वरूप
- ★ चार कषायों का स्वरूप
- ★ पाँच पापों का स्वरूप
- ★ मिथ्यात्व और उससे बचने का उपाय

जिनवाणी में सभी जगह आत्मा को ज्ञाता-दृष्टा कहा गया है। जीवों में परमसुखी अरहंतदेव भी ज्ञाता-दृष्टा ही हैं, जब अरहंत भगवान समान हम भी ज्ञाता दृष्टा ही हैं, तो हम में क्रोध, लोभ, कपट क्यों दिखाई देता है?

देखो भाई। आत्मा में कुछ गुण ऐसे हैं, जो सदा स्वभाव रूप ही रहते हैं, साथ ही कुछ गुण ऐसे भी हैं, जो विभाव रूप भी परिणमित होते हैं। जैसे पानी का स्वभाव शीतलता है, पर अग्नि के संयोग से वह विभावरूप परिणमित होकर गर्म हो जाता है, उसीप्रकार आत्मा कर्म के संयोग से अपने वीतराग स्वरूप को छोड़कर राग-द्वेषरूप परिणमित हो जाता है। इसलिए क्रोधादि करना आत्मा का स्वभाव नहीं; अपितु विभाव है, स्वभाव के विपरीत भाव है।

अत: यह सिद्ध होता है कि आत्मा के **स्वभाव के विपरीत भाव को विभाव कहते हैं।** मिथ्यात्व, राग-द्वेष (कषाय) आनन्द स्वभाव से विपरीत होने से विभाव हैं।

स्वयं को चुनौती दें

- ★ विज्ञान के अनुसार ऐसे पदार्थ बताइए जो अन्य पदार्थों के सहयोग से विभावरूप परिणमित होते हैं।
- ★ क्रोध आत्मा का स्वभाव क्यों नहीं हो सकता?

क्रिएटिव राइटिंग

✣ जिसप्रकार माँ डाँटते हुए विभावरूप हैं, उसीप्रकार अपने जीवन की क्रियाओं में से स्वभाव व विभाव के उदाहरण दीजिए।

कक्षा में चर्चा कीजिए

✣ स्वभाव और विभाव का ज्ञान क्यों लाभकारी है?

जो आत्मा को कसे अर्थात् दु:ख दे, उसे ही कषाय कहते हैं।

यदि हम अपने हाथ को बहुत कस कर बाँध देंगे तो क्या होगा? हमें बहुत दर्द होगा, उसी प्रकार क्रोधादि कषायें आत्मा को बाँध देती हैं अर्थात् दु:खी कर देती हैं। आपने सुना ही होगा कि क्रोधी दूसरों को दु:खी करने से पूर्व स्वयं को दु:खी करता है। तभी तो आँखें लाल हो जाती हैं, चेहरा तमतमा जाता है और शरीर काँपने लगता है। क्या यह सुखरूप अवस्था है?

कषायें चार प्रकार की होती हैं - 1. क्रोध 2. मान 3. माया 4. लोभ।

हम जो गुस्सा करते हैं उसे ही क्रोध कहते हैं। मुख्यतः जब हम ऐसा मानते हैं कि 'इसने मेरा बुरा किया' तो आत्मा में क्रोध उत्पन्न होता है और जब हम यह मान लेते हैं कि 'दुनिया की वस्तुओं से मैं बड़ा हो जाऊँगा' तब मान उत्पन्न होता है। घमंड मान को ही कहते हैं।

इसी प्रकार छल-कपट को माया कहते हैं। मायाचारी जीव के मन में कुछ और होता है, वह कहता कुछ और है और करता उससे भी अलग कुछ और ही है। छल-कपट लोभी जीवों में अधिक पाया जाता है। मायाचारी जीव मरकर पशु होते हैं।

चौथी लोभ कषाय बहुत खतरनाक कषाय है। कोई वस्तु देखी कि यह मुझे मिल जाए, लोभी जीव सदा यही सोचता रहता है। लोभ को पाप का बाप कहा गया है; क्योंकि इसी के वश होकर जीव घोर पाप करता है अर्थात् हर पाप के पीछे लोभ कषाय ही कार्य करती है।

जीवन में उतारें

+ इन-इन परिस्थितियों में आप कौन-कौनसी कषाय करते हैं?

खेल-कूद प्रतियोगिता में प्रतिस्पर्धा का भाव।

अपने सहपाठी की परीक्षा की पढ़ाई के दौरान सहायता नहीं करना।

मेरी स्वर्ग की सीट पक्की है; क्योंकि सबसे ज्यादा उपवास मैं ही करता हूँ।

तीव्रता और मंदता के आधार पर इन कषायों के और चार भेद होते हैं - **अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन; ऐसे कुल 16 कषायें होती हैं।**

चार कषायों की स्थिति

विशेष बात यह है कि क्रोध, मान, माया, लोभ - इन चारों कषायों को जगत का प्रत्येक व्यक्ति खराब मानता है, इन्हें अपने जीवन में से निकालना चाहता है। फिर भी जाने-अनजाने उसके प्रतिदिन का हर कार्य कषायों से ही संचालित होता है। अतः हमारी समस्या यह है कि हम इनसे छुटकारा कैसे पाएँ?

एक बार कषाय उत्पन्न होने के बाद हम उनसे छूट नहीं सकते। यदि एक बार कषाय उत्पन्न हो गयी तो पाँचों पापों को कराकर ही मानेगी। अतः हमें कषाय उत्पन्न ही न हों, इस ओर प्रयास करना चाहिए।

मिथ्यात्व अर्थात् उल्टी मान्यता के कारण पर-पदार्थ इष्ट या अनिष्ट लगते हैं मुख्यतः इसी कारण कषाय उत्पन्न होती हैं।

सिद्ध कीजिए

- सभी कषायें लोभ के कारण होती हैं।

क्रिएटिव राइटिंग

हम अपने जीवन में चारों कषायों को कैसे सकारात्मक रूप (इतना तो चलता है) कैसे देते हैं?

क्या आप जानते हैं?

- क्रोध और मान दो द्वेषरूप कषाय हैं, माया और लोभ रागरूप कषाय हैं, कैसे?

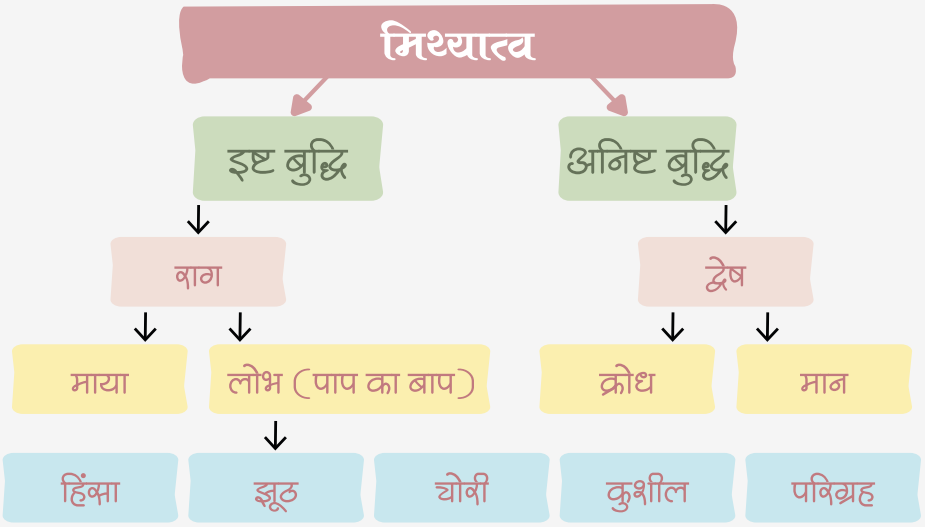

संसार में भोग-उपभोग की अनेकानेक वस्तुएँ पाई जाती हैं। वे हमें कभी अच्छी लगती हैं या कभी बुरी। इसका कारण उल्टी मान्यता ही है। वस्तुत: संसार में दिखाई देने वाली वस्तुएँ और परिस्थितियाँ जैसी हैं, उन्हें वैसा ही स्वीकार करना, उनमें अच्छे-बुरे की कल्पना न करना और उलट-फेर की इच्छा न करना ही मिथ्यात्व छोड़ना है।

यद्यपि लोभ को पाप का बाप कहा गया है, पर सबसे बड़ा पाप मिथ्यात्व ही है; क्योंकि मिथ्यात्व के वश होकर ही जीव घोर पाप करता है।

हिंसा, झूठ, चोरी, कुशल, परिग्रहरूप पाँचों पापों में इसका नाम नहीं आता है, पर मिथ्यात्व ऐसा भयंकर पाप है, जिसके छोड़े बिना संसार भ्रमण नहीं छूटता है।

मिथ्यात्व के साथ हमें पाँचों पापों को समझना भी अनिवार्य है; क्योंकि परिग्रह नामक पाप का प्रथम भेद मिथ्यात्व ही है।

क्रिएटिव राइटिंग

★ क्या चारों कषायों को करने से जो हम चाहते हैं, उसकी उपलब्धि होती है?

कक्षा में चर्चा कीजिए

★ कषायें आत्मा को दुखी कैसे करती हैं?

★ इच्छा ही दु:ख का मूल कारण है।

सारांश

- लोभ पाप का बाप है।
- कषाय उत्पन्न हो, तो पाप कराकर ही मानेगी।
- कषाय मिथ्यात्व के कारण उत्पन्न होती है।
- मिथ्यात्व जाने से कषाय अपने आप चली जाएगी।
- मिथ्यात्व भी पाप ही है, जिसके छोड़े बिना संसार नहीं छूटेगा।

क्या आप जानते हैं?

✢ मोक्षमार्ग में सबसे पहले मिथ्यात्व जाता है और सबसे अन्त में लोभ।

सर्वप्रथम हम पाप किसे कहते हैं – यह समझेंगे।

दु:ख का कारण, बुरा कार्य ही पाप है अर्थात् जिसे करने से मात्र दु:ख ही मिलेगा, ऐसे सभी कार्य पाप हैं।

पाप पाँच प्रकार के होते हैं –

हिंसा, झूठ, चोरी, कुशील और परिग्रह।

हिंसा नामक पाप के दो भेद हैं –

द्रव्य हिंसा व भाव हिंसा

द्रव्य हिंसा – किसी जीव को मारना, सताना, उसका दिल दुखाना ही द्रव्य हिंसा है।

भाव हिंसा – आत्मा में उत्पन्न होने वाली कषाय और मोह-राग-द्वेष के भाव भाव हिंसा है।

भाव हिंसा के संदर्भ में यदि हम गहराई से विचार करेंगे तो पाएँगे कि यदि हमसे कोई भी पाप होगा तो वह पहले हमारे मन में आता है, फिर वचन में और फिर काया (शरीर) से हम उसे करते हैं।

जैसे पहले हम मारने का भाव करते हैं, फिर गुस्से में बोलते हैं कि मैं तुझे मारूँगा और फिर मारते हैं। यदि हम बोलें न भी तो भी पहले निर्णय कर ही लेते हैं, यही भाव हिंसा है।

इसी प्रकार द्रव्य झूठ और भाव झूठ भी जानना।

झूठ – जैसा देखा, जाना, सुना, वैसा न कहकर अन्यथा कहना झूठ है।

इस संदर्भ में विशेष यह है कि किसी ने कहा कि हिंसा में धर्म है, तो क्या हिंसा में धर्म मान लेना और सत्यवादी कहलाने के लिए वैसा ही बोलने लगना क्या धर्म हो जाएगा?

इसलिए कहा गया है कि सत्य बोलने से पहले सत्य जानना आवश्यक है।

सत्य सदा हित, मित और प्रिय होना चाहिए।

क्रिएटिव राइटिंग

✢ हम अपने जीवन में पाँचों पापों को कैसे सकारात्मक रूप (इतना तो चलता है) देते हैं, स्पष्ट करें।

_____

_____

_____

अंतर बताइए

द्रव्य हिंसा और भाव हिंसा में अन्तर

_____

_____

_____

_____

_____

मुख्य पारिभाषिक शब्द

- ★ भाव हिंसा
- ★ पाप
- ★ द्रव्य हिंसा
- ★ झूठ

केस स्टडी

एक जंगल में एक परम पवित्र व परम सत्यवादी मुनिराज वृक्ष के नीचे बैठे हुए ध्यान कर रहे थे। थोड़ी ही दूर एक शिकारी एक गाय को पकड़ने के लिए उसके पीछे दौड़ रहा था। वह गाय मुनिराज के पास से एक ओर गयी। शिकारी वहाँ पहुँच कर दुविधा में पड़ गया कि रास्ते दो हैं, गाय किस ओर गयी होगी? मुनिराज को देख, उनसे पूछने लगा – गाय किस ओर गयी है?

ऐसे में मुनिराज को क्या जवाब देना चाहिए?

✢ सत्य बता देना चाहिए।

✢ गाय का जीवन बचाने के उद्देश्य से झूठ बोलना चाहिए।

✢ मौन धारण कर कुछ नहीं बोलना चाहिए।

चोरी : चोरी के भी दो भेद हैं – द्रव्य चोरी और भाव चोरी।

द्रव्य चोरी – किसी की पड़ी हुई, भूली हुई, रखी हुई वस्तु को उसकी आज्ञा के बिना उठा लेना या उठाकर किसी को दे देना द्रव्य चोरी है।

भाव चोरी – पर-वस्तु को हमने ग्रहण नहीं भी किया हो, पर उठाने का भाव किया हो तो वह भाव भी चोरी है।

कुशील – विषय-वासना बुरी निगाह है। परायी माँ-बहिन को बुरी निगाह से देखना ही कुशील है।

परिग्रह – अनाप-शनाप रुपया-पैसा जोड़ना ही परिग्रह है। भले ही हमारे पास बहुत-सा धन-धान्य, रुपया-पैसा न भी हो, पर उसको जोड़ने का भाव हो, उसके प्रति राग हो और उन्हें अपना मानते हों तो यह परिग्रह ही है।

ये सब तो बहिरंग परिग्रह हैं। मिथ्यात्व, कषाय और नौ कषाय – ये 14 अंतरंग परिग्रह, आत्मा के परिणाम नहीं होने से जीव के लिए परिग्रह ही हैं। अंतरंग परिग्रह ही वस्तुत: जीव के लिए घातक है।

क्रिएटिव राइटिंग

- हम किस-किस प्रकार से जाने-अनजाने में भाव हिंसा करते रहते हैं, उदाहरण से समझाइए।

____

____

____

- क्या पाँचों पापों को करने से जो हम चाहते हैं, उसकी उपलब्धि होती है?

____

____

____

____

परिग्रह के भेद-प्रभेद

24

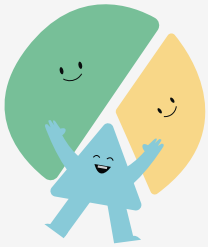

अंतरंग 14

- मिथ्यात्व
- क्रोध
- मान
- माया
- लोभ
- हास्य
- रति
- अरति
- शोक
- भय
- जुगुप्सा
- स्त्री वेद
- पुरुष वेद
- नपुंसक वेद

बाह्य 10

- क्षेत्र
- वास्तु
- धन
- धान्य
- द्विपद
- चतुष्पद
- यान
- शयन-आसन
- कुप्य
- भाँड

कक्षा में चर्चा कीजिए

- पर-पदार्थों को जोड़ने को हम परिग्रह तो मानते हैं, परन्तु मिथ्यात्व और कषाय भी परिग्रह हैं, इनपर हमारा ध्यान नहीं जाता।

मुख्य पारिभाषिक शब्द

★ द्रव्य चोरी ★ कुशील
★ भाव चोरी ★ परिग्रह

वास्तव में सब पापों की जड़ मिथ्यात्व और कषाय ही हैं। कषाय हिंसा भी है और परिग्रह भी, इसलिए यदि हमें पापों से बचना है तो हमें मिथ्यात्व और कषाय छोड़नी चाहिए।

पाप और कषायों को छोड़ने के लिए हमें अलग से कुछ भी पुरुषार्थ नहीं करना है, मात्र अपनी मान्यता सही करनी है। पर-पदार्थों को अपना मानना छोड़ना है, पर पदार्थ में बदलाव कर सकता हूँ - ऐसी मान्यता को छोड़ना है। पर-पदार्थ में इष्ट-अनिष्ट बुद्धि छोड़कर अपनी आत्मा को पहचानना ही मिथ्यात्व छोड़ना है।

कषाय और पाप एक-दो भव तक ही आत्मा को दु:खी करते हैं और मिथ्यात्व अनंतकाल तक संसार में परिभ्रमण का दु:ख देता है। मिथ्यात्व हमें कभी भी आत्मस्वरूप को समझने नहीं देता है। अतः हमें तत्त्वज्ञान के अभ्यास से परपदार्थों से दृष्टि हटाकर आत्मस्वभाव के साधन से मिथ्यात्व का नाश करके अरिहंत भगवान के समान ज्ञाता-दृष्टा बनना है।

केस स्टडी

दस साल की माया ने कोई वीडियो में नए-नए चिड़ाने के तरीक़े सीखे थे। वह उनका प्रयोग करने का मौक़ा ढूँढ़ रही थी। एक दिन उसके स्कूल में आदर्श नाम का एक नया लड़का गलती से माया से टकरा गया।

तभी माया ने अपने दोस्तों के साथ मिलकर उसको 'आदर्श अंधा' तथा अन्य नाम देकर उसका बहुत मज़ाक़ उड़ाया। दूसरे बच्चे भी उसे उन्हीं नए नामों से चिड़ाने लगे।

आदर्श को स्कूल जाना अब पसंद ही नहीं था तो एक दिन उसने प्राचार्य से माया की शिकायत की। माया ने साफ़ इनकार कर दिया कि उसने ऐसा कुछ नहीं किया है। उल्टा अब वो उससे अधिक चिढ़ गई और आदर्श को मज़ा चखाने का निर्णय किया। कभी उसकी बुक छिपा देती तो, कभी रंग या पेंसिल ग़ायब कर देती।

प्रश्न - बतायें कि वो कौन-कौनसा पाप या पाप का भाव कर रही थी?

_____

_____

_____

_____

स्व-मूल्यांकन

कितना समझ आया -

	विषय	पूरा समझ आया	थोड़ा समझ आया	कुछ समझ नहीं आया
1.	जीव का स्वरूप	○	○	○
2.	चार कषायों का स्वरूप	○	○	○
3.	पाँच पापों का स्वरूप	○	○	○
4.	मिथ्यात्व और उससे बचने का उपाय	○	○	○

वीतराग-सर्वज्ञ-हितंकर

वीतराग सर्वज्ञ हितंकर, भविजन की अब पूरो आस।
ज्ञान भानु का उदय करो, मम मिथ्यातम का होय विनास।।

जीवों की हम करुणा पालें, झूठ वचन नहीं कहें कदा।
परधन कबहुँ न हरहूँ स्वामी, ब्रह्मचर्य व्रत रक्खें सदा।।

तृष्णा लोभ न बढ़े हमारा, तोष सुधा नित पिया करें।
श्री जिनधर्म हमारा प्यारा, तिस की सेवा किया करें।।

दूर भगावें बुरी रीतियाँ, सुखद रीति का करें प्रचार।
मेल-मिलाप बढ़ावें हम सब, धर्मोन्नति का करें प्रसार।।

सुख-दुख में हम समता धारें, रहें अचल जिमि सदा अटल।
न्याय-मार्ग को लेश न त्यागें, वृद्धि करें निज आतमबल।।

अष्ट करम जो दुःख हेतु हैं, तिनके क्षय का करें उपाय।
नाम आपका जपें निरन्तर, विघ्न शोक सब ही टल जाय।।

आतम शुद्ध हमारा होवे, पाप मैल नहिं चढ़े कदा।
विद्या की हो उन्नति हम में, धर्म ज्ञान हूँ बढ़े सदा।।

हाथ जोड़कर शीश नवावें, तुमको भविजन खड़े-खड़े।
यह सब पूरो आस हमारी, चरण शरण में आन पड़े।।

तीर्थधाम
ढाईद्वीप जिनायतन

आत्मा ही है शरण

तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन का परिचय

तीर्थधाम ढाईद्वीप जिनायतन विश्व की एक अद्भुत, मनोहारी व दर्शनीय रचना है। यह भारतदेश के सबसे स्वच्छ शहर व वाणिज्यिक नगरी नाम से प्रसिद्ध इन्दौर मध्यप्रदेश में स्थित है। यह रचना कृत्रिम होते हुए भी जिनागम में वर्णित अकृत्रिम ढाईद्वीप की ही प्रतिकृति है।

जिस प्रकार शास्त्रों में मध्यलोक में बीचोंबीच सर्वप्रथम जम्बूद्वीप; फिर लवण समुद्र, धातकीखण्ड द्वीप, कालोद समुद्र व पुष्करांध द्वीप स्थित हैं। उनमें पंचमेरु की रचना है, अनेकविध पर्वत, क्षेत्र, नदियाँ व अकृत्रिम चैत्यालय हैं; उनका जैसा आकार, रंग आदि का वर्णन किया गया है; उसीप्रकार इस कृत्रिम रचना में भी यथावत् चित्रण किया गया है।

इस कृत्रिम ढाईद्वीप का बाह्यरूप तो सुंदर है ही; साथ ही इसके अंदर चर्मचक्षुओं को आकर्षित करने वाले वीतराग छवियुक्त भव्य जिनबिंब विराजमान हैं। इनमें मध्यलोक के ढाईद्वीप संबंधी **398**, पाँच भरत व पाँच ऐरावत क्षेत्र की त्रिकाल चौबीसी के **720**, विदेहक्षेत्रस्थ विद्यमान बीस तीर्थंकर दो स्थानों पर होने से **40** तथा इनके साथ अतिरिक्त **6** जिनबिंब और होने से कुल **1165** भगवन्तों की प्रतिमाएँ प्रतिष्ठित होकर शोभायमान हैं।

आध्यात्मिकसत्पुरुष श्री कानजी स्वामी के पुण्य प्रभावना योग में मुमुक्षु समाज में अनेकविध संकुलों का निर्माण हुआ है, उनमें यह ढाईद्वीप जिनायतन अपना एक अलग ही स्थान रखता है।

लगभग डेढ़ एकड़ में फैले इस संकुल में ऊपर **18** हजार स्क्वायर फीट का विशाल ढाईद्वीप जिन मंदिर है। नीचे का सम्पूर्ण परिसर **36** हजार स्क्वायर फीट है; जिसमें विद्यमान बीस तीर्थंकर जिनालय हैं, जहाँ विश्व की सबसे ऊँची **31** इंच की स्फटिक मणि की श्री सीमंधर स्वामी, स्वर्णमय श्री आदिनाथ भगवान तथा रजतमय श्री महावीर भगवान की प्रतिमाएँ हैं।

इसी विशाल प्रांगण में **13** हजार स्क्वायर फीट का स्वाध्याय भवन है। वहीं पूज्य गुरुदेवश्री का चित्रालय व विशाल ऑडिटोरियम है। इतना ही नहीं, यहाँ **56** कमरों का आधुनिक सुसज्जित अतिथि भवन तथा **24** वन बीएचके फ्लैट्स का विद्वत् निवास भी है।

इनके अतिरिक्त **24** कमरों का एक छात्रावास है, जिसमें इस वर्ष **58** छात्र कक्षा **8**वीं और **9**वीं में अध्ययनरत हैं। यात्रियों की सुविधा के लिए **5400** स्क्वायर फीट की विशाल भोजनशाला व **17** कमरों का स्टाफ क्वार्टर है।

प्रकृति के निकट और गोम्मटगिरि की तलहटी में हातोद रोड पर स्थित यह विशाल प्रांगण इन्दौरवासियों के लिए गौरव का प्रतीक व सम्पूर्ण जैन समाज के लिए दर्शनीय स्थल है। यह एयरपोर्ट से मात्र **3** किलोमीटर की दूरी पर स्थित है।